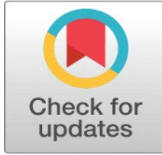


THE NATURE OF DHARMA, DUTY, AND LEADERSHIP IN THE BHISHMA PARVA भीष्मपर्व में धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व का स्वरूप

Meenakshi Singh Rawat ¹ 

¹ Assistant Professor, Department of Education, Uttarakhand Sanskrit University, Haridwar, India



Received 22 October 2024
Accepted 27 November 2024
Published 31 December 2024

Corresponding Author

Meenakshi Singh Rawat,
singhmeenakshi2015@gmail.com

DOI
[10.29121/ShodhSamajik.v1.i1.2024.177](https://doi.org/10.29121/ShodhSamajik.v1.i1.2024.177)

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2025 The Author(s). This work is licensed under a [Creative Commons Attribution 4.0 International License](https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.



ABSTRACT

English: The Mahabharata is an invaluable heritage of Indian culture, philosophy, and ethical thought. Among its eighteen Parvas (books), the Bhishma Parva holds a special place, as it presents an integrated perspective on Dharma (righteousness/duty), duty, leadership, and a spiritual worldview. This Parva contains the divine teachings of the Shrimad Bhagavad Gita, which is considered a foundational text of Indian philosophy. The present research paper offers a critical study of the concepts of Dharma, the sense of duty, and leadership as expounded in the Bhishma Parva. The study reveals that the Bhishma Parva does not merely describe a war; rather, it presents ideals regarding human values, ethical decision-making, and responsible leadership. In this Parva, Dharma is interpreted within the broad context of duty, justice, truth, and public welfare. Furthermore, it provides practical guidance for human life through principles such as Nishkama Karma (selfless action), self-restraint, and leadership. Even in the modern era, its teachings remain equally relevant for ethical leadership, social responsibility, and personal development.

Hindi: महाभारत भारतीय संस्कृति, दर्शन तथा नैतिक चिन्तन की अमूल्य धरोहर है। इसके अठारह पर्वों में भीष्मपर्व का विशेष स्थान है, क्योंकि इसमें धर्म, कर्तव्य, नेतृत्व तथा आध्यात्मिक जीवन-दृष्टि का समन्वित स्वरूप प्राप्त होता है। इसी पर्व में श्रीमद्भगवद्गीता का दिव्य उपदेश निहित है, जो भारतीय दर्शन का आधारभूत ग्रन्थ माना जाता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में भीष्मपर्व में प्रतिपादित धर्म, कर्तव्यबोध तथा नेतृत्व सम्बन्धी अवधारणाओं का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भीष्मपर्व केवल युद्ध का वर्णन नहीं करता, बल्कि मानवीय मूल्यों, नैतिक निर्णयों तथा उत्तरदायी नेतृत्व के आदर्शों को भी प्रस्तुत करता है। इस पर्व में धर्म को कर्तव्य, न्याय, सत्य तथा लोककल्याण के व्यापक सन्दर्भ में व्याख्यायित किया गया है। साथ ही निष्काम कर्म, आत्मसंयम तथा नेतृत्व के सिद्धान्तों के माध्यम से मानव जीवन के लिए व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान किया गया है। आधुनिक युग में भी इसकी शिक्षाएँ नैतिक नेतृत्व, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा व्यक्तिगत विकास के लिए समान रूप से प्रासंगिक हैं।

Keywords: Bhishma Parva, Mahabharata, Dharma, Duty, Leadership, Bhagavad Gita, Nishkama Karma, Tradition, भीष्मपर्व, महाभारत, धर्म, कर्तव्य, नेतृत्व, भगवद्गीता, निष्काम कर्म

1. प्रस्तावना

महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाभारत भारतीय ज्ञानपरम्परा का सर्वाधिक व्यापक एवं प्रभावशाली ग्रन्थ है। यह केवल एक महाकाव्य नहीं, अपितु भारतीय संस्कृति, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र तथा नैतिकता का विश्वकोश माना जाता है। महाभारत के अठारह पर्वों में भीष्मपर्व का विशेष महत्व है। इसमें कुरुक्षेत्र युद्ध के प्रारम्भिक दस दिनों का वर्णन प्राप्त होता है तथा इसी पर्व में भगवद्गीता का अमर उपदेश निहित है [Vedavyasa \(2019\)](#)। भीष्मपर्व का मूल स्वर धर्म और अधर्म के मध्य संघर्ष को उद्घाटित करना है। कुरुक्षेत्र का युद्ध केवल राजनीतिक सत्ता प्राप्ति का साधन नहीं था, बल्कि न्याय, सत्य तथा धर्म की स्थापना के लिए लड़ा गया संघर्ष था। इस तथ्य को गीता के प्रथम श्लोक से समझा जा सकता है **धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे**

समवेता युयुत्सवः। मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय॥ (भगवद्गीता 1.1) इस श्लोक में प्रयुक्त "धर्मक्षेत्र" शब्द सम्पूर्ण भीष्मपर्व की वैचारिक पृष्ठभूमि निर्मित करता है। कुरुक्षेत्र को धर्मक्षेत्र कहकर यह संकेत दिया गया है कि युद्ध की प्रत्येक घटना का मूल्यांकन नैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से किया जाना चाहिए [Vedavyasa \(2022\)](#)। धृतराष्ट्र द्वारा प्रयुक्त "मामकाः" शब्द उनकी आसक्ति, पक्षपात तथा पुत्रमोह को प्रकट करता है, जो अन्ततः महाभारत युद्ध के प्रमुख कारणों में से एक बनता है [Radhakrishnan \(2007\)](#)। भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है, बल्कि न्याय, उत्तरदायित्व, लोककल्याण तथा आत्मानुशासन से सम्बद्ध है। अर्जुन का विषाद, श्रीकृष्ण का उपदेश तथा भीष्म का जीवन इन सभी के माध्यम से धर्म और कर्तव्य के विविध आयामों का प्रतिपादन किया गया है। साथ ही यह पर्व नेतृत्व के दो महत्वपूर्ण प्रतिमान प्रस्तुत करता है भीष्म का प्रतिज्ञा एवं निष्ठा पर आधारित नेतृत्व तथा श्रीकृष्ण का नैतिक, दूरदर्शी एवं लोकमंगलकारी नेतृत्व। वर्तमान समय में जब समाज नैतिक संकट, नेतृत्वहीनता तथा मूल्य-संकट जैसी समस्याओं का सामना कर रहा है, तब भीष्मपर्व की शिक्षाएँ विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होती हैं। इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध-पत्र में भीष्मपर्व में निहित धर्म, कर्तव्य तथा नेतृत्व सम्बन्धी विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

2. अध्ययन की आवश्यकता

वर्तमान युग में समाज नैतिक मूल्यों के हास, कर्तव्यविमुखता, नेतृत्व-संकट तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी जैसी अनेक समस्याओं का सामना कर रहा है। ऐसे समय में भारतीय ज्ञानपरम्परा में निहित जीवन-मूल्यों का पुनर्पाठ अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। महाभारत का भीष्मपर्व धर्म, कर्तव्य, नैतिकता तथा नेतृत्व के सिद्धान्तों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसमें वर्णित भगवद्गीता मानव जीवन के विविध संकटों का समाधान प्रस्तुत करती है तथा व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ, उत्तरदायी एवं मूल्याधारित जीवन जीने की प्रेरणा देती है। यद्यपि भीष्मपर्व और भगवद्गीता पर पर्याप्त अध्ययन उपलब्ध है, तथापि धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व के पारस्परिक सम्बन्धों का समन्वित एवं समीक्षात्मक अध्ययन अपेक्षाकृत कम हुआ है। विशेष रूप से वर्तमान सामाजिक, प्रशासनिक तथा नैतिक परिप्रेक्ष्य में भीष्मपर्व की शिक्षाओं की प्रासंगिकता को समझना आवश्यक है। इस दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन न केवल भारतीय दार्शनिक चिन्तन को समझने में सहायक होगा, बल्कि समकालीन समाज के लिए भी व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करेगा।

3. अध्ययन के उद्देश्य

- 1) भीष्मपर्व में प्रतिपादित धर्म की अवधारणा का विश्लेषण करना।
- 2) भीष्मपर्व में वर्णित कर्तव्यबोध एवं निष्काम कर्म के सिद्धान्तों का अध्ययन करना।
- 3) भीष्म पितामह एवं श्रीकृष्ण के नेतृत्व के स्वरूप का समीक्षात्मक विवेचन करना।
- 4) धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व के मध्य अन्तर्सम्बन्धों को स्पष्ट करना।
- 5) भीष्मपर्व में निहित नैतिक एवं दार्शनिक मूल्यों का मूल्यांकन करना।
- 6) समकालीन सामाजिक, प्रशासनिक एवं नेतृत्व सम्बन्धी चुनौतियों के सन्दर्भ में भीष्मपर्व की प्रासंगिकता का अध्ययन करना।
- 7) भारतीय ज्ञानपरम्परा में भीष्मपर्व के योगदान को रेखांकित करना।

4. भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में अध्ययन का महत्त्व

भारतीय ज्ञान परम्परा मानव जीवन के समग्र विकास पर आधारित है, जिसमें धर्म, नैतिकता, कर्तव्य, आत्मानुशासन, लोककल्याण तथा आध्यात्मिक उन्नति को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। महाभारत का भीष्मपर्व इस ज्ञान परम्परा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, क्योंकि इसमें मानव जीवन के नैतिक, सामाजिक एवं दार्शनिक पक्षों का गहन विश्लेषण प्राप्त होता है। विशेष रूप से भगवद्गीता के माध्यम से धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व के ऐसे सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए हैं, जो भारतीय चिन्तन की आधारशिला माने जाते हैं।

भारतीय ज्ञान परम्परा में धर्म को केवल धार्मिक आस्था के रूप में नहीं, बल्कि सत्य, न्याय, उत्तरदायित्व तथा लोकमंगल के सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया गया है। भीष्मपर्व में धर्म की इसी व्यापक अवधारणा का प्रतिपादन मिलता है। इसके अतिरिक्त निष्काम कर्म का सिद्धान्त व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ एवं उत्तरदायी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करता है, जो भारतीय ज्ञान परम्परा के कर्मयोग दर्शन का मूल आधार है। नेतृत्व की दृष्टि से भी यह अध्ययन महत्वपूर्ण है, क्योंकि भीष्म और श्रीकृष्ण के चरित्र भारतीय नेतृत्व-दर्शन के दो विशिष्ट प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं। भीष्म त्याग, निष्ठा एवं अनुशासन के प्रतीक हैं, जबकि श्रीकृष्ण नैतिकता, दूरदर्शिता, विवेक तथा लोककल्याणकारी नेतृत्व के आदर्श रूप में प्रतिष्ठित हैं। वर्तमान समय में मूल्याधारित नेतृत्व की आवश्यकता को देखते हुए इन आदर्शों का अध्ययन विशेष महत्व रखता है। यह अध्ययन भारतीय ज्ञान परम्परा में निहित जीवन-मूल्यों को समझने तथा उन्हें समकालीन सामाजिक, शैक्षिक, प्रशासनिक एवं नैतिक संदर्भों से जोड़ने का प्रयास करता है।

5. साहित्यिक सर्वेक्षण

महाभारत तथा भगवद्गीता पर भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों द्वारा व्यापक अध्ययन किया गया है। राधाकृष्णन ने भगवद्गीता को मानव जीवन के नैतिक एवं आध्यात्मिक मार्गदर्शन का सार्वकालिक ग्रन्थ माना है। उनके अनुसार गीता का उद्देश्य व्यक्ति को धर्म, आत्मसंयम तथा उत्तरदायी कर्म की दिशा में प्रेरित करना है [Radhakrishnan \(2007\)](#)। तिलक ने *गीता रहस्य* में कर्मयोग को गीता का मूल संदेश बताते हुए निष्काम कर्म को मानव जीवन का सर्वोच्च आदर्श माना है। उनके अनुसार धर्म का वास्तविक स्वरूप उत्तरदायित्वपूर्ण कर्म में निहित है [Tilak \(2011\)](#)। गांधी ने *अनासक्ति योग* में गीता के कर्मयोग की व्याख्या करते हुए इसे आत्मशुद्धि तथा लोकसेवा का माध्यम माना है [Gandhi \(2010\)](#)। श्री अरविन्द ने गीता के दार्शनिक एवं नेतृत्वपरक पक्ष का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि गीता केवल आध्यात्मिक ग्रन्थ नहीं, बल्कि जीवन-प्रबन्धन का भी उत्कृष्ट मार्गदर्शक है [Aurobindo \(2005\)](#)। पाण्डुरंग वामन शास्त्री ने महाभारत के विभिन्न प्रसंगों का विश्लेषण करते हुए धर्म तथा नेतृत्व के व्यावहारिक स्वरूप को स्पष्ट किया है [Shastri \(2014\)](#)। बलदेव उपाध्याय ने भारतीय दर्शन की परम्परा में धर्म को सामाजिक एवं नैतिक व्यवस्था का आधार माना है [Upadhyay \(2018\)](#)। रामनाथ शर्मा ने महाभारत में धर्म की अवधारणा का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि धर्म का सम्बन्ध केवल कर्मकाण्ड से नहीं, बल्कि न्याय, सत्य तथा उत्तरदायित्व से है [Sharma \(2016\)](#)। स्वामी चिन्मयानन्द ने गीता के नेतृत्व, व्यक्तित्व-विकास तथा आत्मानुशासन सम्बन्धी पक्षों पर विशेष बल दिया है [Chinmayananda \(2002\)](#)। उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि धर्म, कर्मयोग, नेतृत्व तथा गीता-दर्शन पर पर्याप्त अध्ययन हुआ है, किन्तु भीष्मपर्व के सन्दर्भ में धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व के समन्वित अध्ययन अपेक्षाकृत कम प्राप्त होते हैं।

6. शोध-अन्तराल (RESEARCH GAP)

उपलब्ध साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अधिकांश विद्वानों ने भगवद्गीता के कर्मयोग, धर्मदर्शन अथवा नेतृत्व सम्बन्धी विचारों का पृथक्-पृथक् अध्ययन किया है। कुछ अध्ययनों में भीष्म के नेतृत्व तथा त्यागमय जीवन का विश्लेषण किया गया है, जबकि अन्य अध्ययनों में श्रीकृष्ण के नैतिक एवं आध्यात्मिक नेतृत्व पर बल दिया गया है। किन्तु भीष्मपर्व को एक समग्र इकाई के रूप में ग्रहण कर उसमें प्रतिपादित धर्म, कर्तव्यबोध तथा नेतृत्व के पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण अपेक्षाकृत कम दिखाई देता है। विशेष रूप से अर्जुन के धर्मसंकट, निष्काम कर्म के सिद्धान्त, भीष्म के नैतिक नेतृत्व तथा श्रीकृष्ण के लोकमंगलकारी नेतृत्व को एकीकृत दृष्टिकोण से समझने वाले अध्ययन सीमित हैं। अतः प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भीष्मपर्व में प्रतिपादित धर्म, कर्तव्य तथा नेतृत्व की अवधारणाओं का समन्वित एवं समीक्षात्मक अध्ययन करना है, जिससे भारतीय ज्ञानपरम्परा के इन महत्वपूर्ण आयामों को समकालीन सन्दर्भों में पुनः समझा जा सके।

7. भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा

महाभारत के भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा अत्यन्त व्यापक, व्यावहारिक तथा बहुआयामी रूप में प्रतिपादित हुई है। यहाँ धर्म का अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठानों अथवा कर्मकाण्डों तक सीमित नहीं है, बल्कि न्याय, सत्य, कर्तव्य, लोककल्याण तथा नैतिक उत्तरदायित्व से भी है। भीष्मपर्व का मूल कथानक धर्म और अधर्म के मध्य संघर्ष पर आधारित है। कुरुक्षेत्र को धर्मक्षेत्र कहा जाना इस तथ्य का संकेत है कि यह युद्ध केवल राजनीतिक सत्ता प्राप्ति का माध्यम नहीं था, बल्कि धर्म की स्थापना और न्याय की रक्षा के लिए भी लड़ा गया था [Vedavyasa \(2019\)](#)। भीष्मपर्व में धर्म का प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वरूप स्वधर्म के रूप में प्रकट होता है। अर्जुन जब अपने गुरुजनों, सम्बन्धियों तथा बन्धु-बान्धवों को युद्धभूमि में देखकर विषादग्रस्त हो जाते हैं, तब श्रीकृष्ण उन्हें उनके स्वधर्म का स्मरण कराते हैं **स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि। धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते॥ (भगवद्गीता 2.31)** इस श्लोक में धर्म को व्यक्ति के सामाजिक एवं नैतिक उत्तरदायित्व के रूप में परिभाषित किया गया है। यहाँ धर्म का आशय केवल धार्मिक विश्वासों से नहीं, बल्कि अपने दायित्वों के निष्ठापूर्वक पालन से है। अर्जुन का क्षत्रिय धर्म न्याय और सत्य की रक्षा करना था; अतः युद्ध से विमुख होना उनके स्वधर्म के विपरीत था [Tilak \(2011\)](#)। धर्म की यह अवधारणा भीष्मपर्व में कर्मप्रधान दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करती है। श्रीकृष्ण के अनुसार धर्म निष्क्रियता नहीं, बल्कि उत्तरदायित्वपूर्ण कर्म का नाम है। व्यक्ति का धर्म तभी सार्थक होता है जब वह कठिन परिस्थितियों में भी अपने कर्तव्य का पालन करे। राधाकृष्णन के अनुसार गीता में धर्म का वास्तविक स्वरूप न्याय, आत्मसंयम तथा नैतिक उत्तरदायित्व के समन्वय में निहित है [Radhakrishnan \(2007\)](#)। भीष्मपर्व में धर्म का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम लोककल्याण है। धर्म केवल व्यक्ति की आत्मिक उन्नति तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज की व्यवस्था, नैतिकता तथा सामूहिक हित से भी सम्बद्ध है। इस दृष्टि से धर्म सामाजिक उत्तरदायित्व का भी प्रतीक बन जाता है। श्रेष्ठ व्यक्तियों के आचरण को समाज के लिए आदर्श माना गया है, जिससे धर्म का सामाजिक स्वरूप स्पष्ट होता है [Aurobindo \(2005\)](#)। भारतीय दार्शनिक परम्परा में धर्म को विश्व-व्यवस्था के संरक्षण का आधार माना गया है। भीष्मपर्व में भी धर्म को ऐसी शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो व्यक्ति, समाज और राज्य के मध्य संतुलन स्थापित करती है। उपाध्याय के अनुसार धर्म वह तत्त्व है जो मानव जीवन को नैतिक दिशा प्रदान करता है तथा सामाजिक समरसता की स्थापना करता है [Upadhyay \(2018\)](#)। भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा का आध्यात्मिक पक्ष भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। श्रीकृष्ण धर्म को आत्मज्ञान, आत्मसंयम तथा मोक्ष की प्राप्ति का साधन मानते हैं। इस प्रकार धर्म केवल बाह्य आचरण का विषय नहीं है, बल्कि आन्तरिक शुद्धि और आध्यात्मिक विकास का भी आधार है [Vedavyasa \(2022\)](#)। अतः कहा जा सकता है कि भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा बहुआयामी स्वरूप में प्रस्तुत हुई है। इसमें कर्तव्य, न्याय, सत्य, लोककल्याण, आत्मसंयम तथा आध्यात्मिक उन्नति का समन्वित दर्शन प्राप्त होता है। यही कारण है कि भीष्मपर्व भारतीय धर्म-दर्शन का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है और आज भी नैतिक जीवन के लिए प्रेरणादायक है।

8. कर्तव्यबोध एवं निष्काम कर्म

महाभारत के भीष्मपर्व में कर्तव्यबोध तथा निष्काम कर्म की अवधारणाएँ केंद्रीय स्थान रखती हैं। भगवद्गीता, जो भीष्मपर्व का अभिन्न अंग है, इन सिद्धान्तों का सर्वाधिक प्रामाणिक प्रतिपादन करती है। कुरुक्षेत्र युद्ध के प्रारम्भ में अर्जुन मोह, करुणा तथा संशय से ग्रस्त होकर अपने कर्तव्य से विमुख होने लगते हैं। ऐसी स्थिति में श्रीकृष्ण उन्हें धर्म, कर्तव्य और कर्मयोग का उपदेश देते हैं, जो भारतीय दार्शनिक चिन्तन की अमूल्य धरोहर है [Vedavyasa \(2022\)](#)। कर्तव्यबोध का आधार स्वधर्म की अवधारणा है। श्रीकृष्ण अर्जुन को यह समझाते हैं कि व्यक्ति को परिस्थितियों से विचलित हुए बिना अपने उत्तरदायित्वों का पालन करना चाहिए। जीवन में अनेक बार ऐसे अवसर आते हैं जब व्यक्तिगत भावनाएँ और सामाजिक दायित्व परस्पर टकराते हैं। ऐसे समय में धर्मानुकूल कर्तव्य का पालन ही वास्तविक कर्तव्यबोध माना जाता है [Tilak \(2011\)](#)। कर्तव्यबोध का एक महत्वपूर्ण पक्ष मानसिक दृढ़ता और साहस भी है। अर्जुन की दुर्बलता

को दूर करते हुए श्रीकृष्ण उन्हें भावनात्मक कमजोरी त्यागकर कर्तव्यपथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि उत्तरदायी जीवन के लिए आत्मविश्वास, विवेक तथा साहस आवश्यक गुण हैं [Radhakrishnan \(2007\)](#)। भीष्मपर्व में निष्काम कर्म का सिद्धान्त विशेष रूप से प्रतिपादित हुआ है। श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्म करते रहने तथा कर्मफल के प्रति आसक्ति त्यागने की शिक्षा देते हैं **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (भगवद्गीता 2.47)** इस श्लोक में गीता का कर्मयोग-दर्शन निहित है। व्यक्ति का अधिकार केवल कर्म करने में है, फल पर नहीं। कर्मफल की अत्यधिक चिंता व्यक्ति को तनाव, मोह तथा असन्तोष की ओर ले जाती है, जबकि निष्काम कर्म उसे आन्तरिक शान्ति तथा आत्मिक उन्नति की दिशा में अग्रसर करता है [Gandhi \(2010\)](#)। निष्काम कर्म का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत मुक्ति नहीं, बल्कि लोककल्याण भी है। गीता में कर्म को समाजोपयोगी तथा उत्तरदायित्वपूर्ण बनाने पर बल दिया गया है। श्री अरविन्द के अनुसार निष्काम कर्म व्यक्ति के आत्मविकास और सामाजिक हित दोनों का साधन है [Aurobindo \(2005\)](#)। कर्तव्यबोध और निष्काम कर्म का सम्बन्ध लोकसंग्रह की भावना से भी है। समाज के श्रेष्ठ व्यक्तियों का आचरण सामान्य जन के लिए आदर्श बनता है। अतः व्यक्ति का कर्तव्य केवल स्वयं तक सीमित नहीं होता, बल्कि उसका प्रभाव व्यापक सामाजिक जीवन पर भी पड़ता है [Upadhyay \(2018\)](#)। भीष्मपर्व में कर्तव्यबोध और निष्काम कर्म का आदर्श केवल अर्जुन तक सीमित नहीं है। भीष्म पितामह का सम्पूर्ण जीवन प्रतिज्ञा, निष्ठा तथा उत्तरदायित्व के पालन का उदाहरण प्रस्तुत करता है। यद्यपि उनके जीवन में नैतिक द्वन्द्व विद्यमान था, फिर भी उन्होंने अपने दायित्वों का निर्वाह अन्त तक किया। इस दृष्टि से भीष्म का चरित्र कर्तव्यनिष्ठ जीवन का उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है [Vedavyasa \(2019\)](#)। अतः भीष्मपर्व में कर्तव्यबोध तथा निष्काम कर्म की अवधारणाएँ मानव जीवन को उत्तरदायी, कर्मप्रधान तथा नैतिक बनाने की प्रेरणा देती हैं। ये सिद्धान्त व्यक्ति को फलासक्ति से मुक्त होकर लोककल्याण और आत्मोन्नति के मार्ग पर अग्रसर करते हैं। वर्तमान युग में भी प्रशासन, शिक्षा, प्रबन्धन तथा सामाजिक जीवन में इन शिक्षाओं की प्रासंगिकता अक्षुण्ण बनी हुई है।

9. नेतृत्व का आदर्श

भीष्मपर्व में नेतृत्व की अवधारणा अत्यन्त समृद्ध एवं बहुआयामी रूप में प्रतिपादित हुई है। यहाँ नेतृत्व केवल शासन या अधिकार तक सीमित नहीं है, बल्कि नैतिकता, कर्तव्यनिष्ठा, आत्मसंयम, दूरदर्शिता तथा लोककल्याण जैसे गुणों से भी सम्बद्ध है। भीष्मपर्व में विशेष रूप से दो महान नेतृत्व प्रतिमान दृष्टिगोचर होते हैं भीष्म पितामह का आदर्शवादी एवं कर्तव्यनिष्ठ नेतृत्व तथा श्रीकृष्ण का नैतिक, दूरदर्शी एवं लोकमंगलकारी नेतृत्व। ये दोनों नेतृत्व प्रतिमान भारतीय चिन्तन में आदर्श नेतृत्व के उत्कृष्ट उदाहरण माने जाते हैं।

9.1. भीष्म का नेतृत्व

महाभारत में भीष्म पितामह त्याग, निष्ठा, आत्मसंयम तथा कर्तव्यपरायणता के प्रतीक हैं। भीष्मपर्व में वे कौरव सेना के प्रधान सेनापति के रूप में दिखाई देते हैं। यद्यपि वे पाण्डवों के प्रति स्नेह रखते थे, तथापि हस्तिनापुर के सिंहासन और अपनी प्रतिज्ञा के प्रति अटूट निष्ठा के कारण उन्होंने कौरव पक्ष का नेतृत्व स्वीकार किया। यह उनके कर्तव्यनिष्ठ नेतृत्व का उत्कृष्ट उदाहरण है [Vedavyasa \(2019\)](#)। भीष्म के नेतृत्व की आधारशिला उनका त्यागमय जीवन है। उन्होंने राज्य और वंश के हित में आजीवन ब्रह्मचर्य तथा राजसिंहासन के त्याग का व्रत ग्रहण किया। यह त्याग नेतृत्व में व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर सामूहिक हित को स्थान देने की भावना को व्यक्त करता है [Shastri \(2014\)](#)। उनके व्यक्तित्व का यह पक्ष आधुनिक नेतृत्व सिद्धान्तों में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। भीष्म सत्य, धर्म तथा मर्यादा के प्रति अत्यन्त प्रतिबद्ध थे। उनके नेतृत्व का आधार नैतिक मूल्यों में निहित था। वे सत्ता की अपेक्षा धर्म और न्याय को अधिक महत्व देते थे। अनेक अवसरों पर उन्होंने दुर्योधन को धर्मानुकूल आचरण करने की सलाह दी, जिससे उनके नैतिक नेतृत्व का स्वरूप स्पष्ट होता है [Upadhyay \(2018\)](#)। युद्धभूमि में भीष्म एक कुशल सेनानायक के रूप में भी दिखाई देते हैं। उनके नेतृत्व में कौरव सेना संगठित, अनुशासित तथा

रणनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ बनी रही। उनकी संगठन क्षमता, युद्धनीति तथा अनुशासनप्रियता उन्हें एक प्रभावी सैन्य नेता के रूप में प्रतिष्ठित करती है [Vedavyasa \(2019\)](#)। भीष्म के नेतृत्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष आत्मानुशासन है। उनका सम्पूर्ण जीवन इस तथ्य का प्रमाण है कि नेतृत्व की वास्तविक शक्ति व्यक्ति के चरित्र और आत्मसंयम में निहित होती है। तिलक के अनुसार नेतृत्व का स्थायी आधार बाह्य शक्ति नहीं, बल्कि आन्तरिक नैतिक दृढ़ता है [Tilak \(2011\)](#)। यद्यपि भीष्म का नेतृत्व आदर्शवादी था, तथापि उनके जीवन में एक नैतिक द्वन्द्व भी विद्यमान था। वे धर्म को भलीभाँति समझते थे, किन्तु अपनी प्रतिज्ञा और राजनिष्ठा के कारण कौरव पक्ष में बने रहे। यह स्थिति नेतृत्व के जटिल नैतिक पक्षों को उद्घाटित करती है। गांधी ने ऐसी परिस्थितियों को कर्तव्य और नैतिकता के मध्य संघर्ष का उदाहरण माना है [Gandhi \(2010\)](#)। अतः भीष्म का नेतृत्व त्याग, अनुशासन, सत्यनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता तथा उत्तरदायित्व का आदर्श प्रस्तुत करता है। उनका व्यक्तित्व यह शिक्षा देता है कि नेतृत्व केवल अधिकार का विषय नहीं, बल्कि लोकहित के प्रति समर्पण और नैतिक प्रतिबद्धता का नाम है।

9.2. श्रीकृष्ण का नेतृत्व

महाभारत के भीष्मपर्व में श्रीकृष्ण आदर्श नेतृत्व के सर्वोच्च प्रतिमान के रूप में उपस्थित होते हैं। उनका नेतृत्व केवल युद्ध संचालन तक सीमित नहीं है, बल्कि नैतिक मार्गदर्शन, कर्तव्यबोध, निर्णय-क्षमता, लोककल्याण तथा धर्मस्थापना के व्यापक आयामों को समाहित करता है [Vedavyasa \(2022\)](#)। अर्जुन जब युद्धभूमि में मोह और विषाद से ग्रस्त होकर अपने कर्तव्य से विमुख होने लगते हैं, तब श्रीकृष्ण उन्हें धैर्य, साहस और विवेक का उपदेश देते हैं। वे संकटग्रस्त व्यक्ति को आत्मविश्वास प्रदान करने वाले प्रेरणादायी नेता के रूप में सामने आते हैं [Radhakrishnan \(2007\)](#)। श्रीकृष्ण के नेतृत्व का आधार कर्तव्यनिष्ठा है। वे अर्जुन को उनके स्वधर्म का स्मरण कराते हुए धर्मानुकूल कर्म करने की प्रेरणा देते हैं। उनके अनुसार नेतृत्व का आधार व्यक्तिगत भावनाएँ नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व और धर्म का पालन होना चाहिए [Tilak \(2011\)](#)। श्रीकृष्ण का नेतृत्व निष्काम कर्म के सिद्धान्त पर आधारित है। वे व्यक्ति को परिणाम की अपेक्षा कर्तव्य के प्रति समर्पित रहने की शिक्षा देते हैं। इस प्रकार उनका नेतृत्व कर्मयोग, आत्मसंयम तथा नैतिक उत्तरदायित्व पर आधारित दिखाई देता है [Gandhi \(2010\)](#)। श्रेष्ठ नेतृत्व का एक महत्वपूर्ण गुण आदर्श प्रस्तुत करना है। इस संदर्भ में श्रीकृष्ण कहते हैं **यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥ (भगवद्गीता 3.21)** इस श्लोक के अनुसार श्रेष्ठ व्यक्तियों का आचरण समाज के लिए आदर्श बनता है। इसलिए नेता का चरित्र, व्यवहार और निर्णय समाज को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं [Aurobindo \(2005\)](#)। श्रीकृष्ण का नेतृत्व लोककल्याण और धर्मसंस्थापन की भावना से भी प्रेरित है। वे धर्म की रक्षा और अधर्म के विनाश को नेतृत्व का सर्वोच्च उद्देश्य मानते हैं— **यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥ (भगवद्गीता 4.7-8)** इन श्लोकों में लोकमंगलकारी तथा मूल्याधारित नेतृत्व का आदर्श प्रतिपादित हुआ है [Upadhyay \(2018\)](#)। श्रीकृष्ण के नेतृत्व का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष लोकतांत्रिक दृष्टिकोण है। वे अर्जुन को ज्ञान प्रदान करने के पश्चात् अन्तिम निर्णय का अधिकार उसी को देते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि आदर्श नेता अपने अनुयायी को विवेकपूर्ण निर्णय लेने के लिए सक्षम बनाता है, न कि उस पर निर्णय थोपता है [Vedavyasa \(2022\)](#)। अतः श्रीकृष्ण का नेतृत्व नैतिकता, दूरदर्शिता, कर्तव्यनिष्ठा, आत्मसंयम तथा लोकमंगल का समन्वित स्वरूप प्रस्तुत करता है। इस कारण वे भारतीय नेतृत्व-दर्शन के सर्वोच्च आदर्श माने जाते हैं।

10. भीष्मपर्व की समकालीन प्रासंगिकता

यद्यपि भीष्मपर्व की रचना प्राचीन काल में हुई थी, तथापि इसमें प्रतिपादित सिद्धान्त आज भी समान रूप से प्रासंगिक हैं। वर्तमान युग में नैतिक संकट, मूल्यहीनता, नेतृत्वहीनता, सामाजिक विघटन तथा मानसिक तनाव जैसी समस्याएँ व्यापक रूप से दिखाई देती हैं। ऐसे समय में भीष्मपर्व मानव जीवन के लिए नैतिक एवं व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है। भीष्मपर्व की सबसे महत्वपूर्ण समकालीन

प्रासंगिकता उसके कर्तव्यबोध सम्बन्धी दृष्टिकोण में निहित है। आज का समाज अधिकारों पर अधिक बल देता है, जबकि कर्तव्यों की उपेक्षा करता है। गीता में प्रतिपादित स्वधर्म एवं उत्तरदायित्व की भावना आधुनिक प्रशासन, शिक्षा, न्याय तथा सामाजिक जीवन में विशेष रूप से उपयोगी है [Tilak \(2011\)](#)। निष्काम कर्म का सिद्धान्त आधुनिक जीवन में तनाव प्रबन्धन तथा नैतिक संतुलन का आधार बन सकता है। प्रतिस्पर्धा और भौतिकवाद के वातावरण में व्यक्ति परिणामों के प्रति अत्यधिक आसक्त हो जाता है, जिससे तनाव और असन्तोष उत्पन्न होता है। निष्काम कर्म का सिद्धान्त व्यक्ति को कर्म के प्रति समर्पित रहने तथा फलासक्ति से मुक्त होने की प्रेरणा देता है [Gandhi \(2010\)](#)। समकालीन नेतृत्व की दृष्टि से भी भीष्मपर्व अत्यन्त महत्वपूर्ण है। श्रीकृष्ण का नेतृत्व विवेक, नैतिकता, दूरदर्शिता तथा लोककल्याण पर आधारित है, जबकि भीष्म का नेतृत्व त्याग, अनुशासन और निष्ठा का आदर्श प्रस्तुत करता है। वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक व्यवस्था में इन दोनों नेतृत्व प्रतिमानों की विशेष आवश्यकता अनुभव की जाती है [Radhakrishnan \(2007\)](#)। भीष्मपर्व सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को भी प्रोत्साहित करता है। श्रेष्ठ व्यक्तियों के आचरण का समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। इसलिए शिक्षक, प्रशासक, न्यायाधीश, जनप्रतिनिधि तथा सामाजिक नेतृत्व से जुड़े व्यक्तियों के लिए भीष्मपर्व की शिक्षाएँ विशेष रूप से प्रेरणादायक हैं [Aurobindo \(2005\)](#)। आधुनिक जीवन में नैतिक निर्णय-निर्माण की समस्या भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अर्जुन का धर्मसंकट वस्तुतः एक नैतिक द्वन्द्व था, जिसका समाधान श्रीकृष्ण ने धर्म, विवेक तथा आत्मज्ञान के माध्यम से प्रस्तुत किया। यह दृष्टिकोण आज भी व्यक्तिगत तथा व्यावसायिक जीवन में निर्णय लेने की प्रक्रिया को दिशा प्रदान करता है [Upadhyay \(2018\)](#)। अतः भीष्मपर्व की समकालीन प्रासंगिकता उसके नैतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक शिक्षाओं में निहित है। यह पर्व आज भी मनुष्य को कर्तव्यनिष्ठा, निष्काम कर्म, नैतिक नेतृत्व, आत्मसंयम तथा लोककल्याण की दिशा में प्रेरित करता है।

11. भावी अध्ययन हेतु सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन में भीष्मपर्व के संदर्भ में धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व की अवधारणाओं का समीक्षात्मक विश्लेषण किया गया है। तथापि यह विषय व्यापक एवं बहुआयामी है, जिसके विभिन्न पक्षों पर आगे और गहन अनुसंधान की आवश्यकता है। भावी शोधार्थियों के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं—

- 1) भीष्मपर्व में प्रतिपादित धर्म की अवधारणा का अन्य पर्वों, विशेषतः शान्तिपर्व एवं अनुशासनपर्व में वर्णित धर्म-दर्शन के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- 2) भगवद्गीता में प्रतिपादित निष्काम कर्म सिद्धान्त का आधुनिक प्रबंधन, प्रशासन एवं संगठनात्मक नेतृत्व के संदर्भ में अनुप्रयोगात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- 3) भीष्म एवं श्रीकृष्ण के नेतृत्व प्रतिमानों का आधुनिक नेतृत्व सिद्धान्तों के साथ तुलनात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।
- 4) भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में भीष्मपर्व के नैतिक एवं दार्शनिक सिद्धान्तों का समकालीन शिक्षा व्यवस्था में योगदान विषयक अध्ययन किया जा सकता है।
- 5) भीष्मपर्व में वर्णित धर्मसंकट एवं निर्णय-निर्माण प्रक्रिया का आधुनिक नैतिक दर्शन के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया जा सकता है।
- 6) महाभारत के अन्य प्रमुख पात्रों युधिष्ठिर, विदुर, द्रोणाचार्य तथा कर्ण के नेतृत्व एवं कर्तव्यबोध का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- 7) भीष्मपर्व में निहित जीवन-मूल्यों तथा भारतीय ज्ञान प्रणाली के मध्य अन्तर्सम्बन्धों पर विस्तृत अनुसंधान की सम्भावनाएँ विद्यमान हैं।
- 8) भीष्मपर्व की शिक्षाओं का समकालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं वैश्विक नेतृत्व चुनौतियों के समाधान के संदर्भ में व्यावहारिक अध्ययन किया जा सकता है।

12. निष्कर्ष

महाभारत का भीष्मपर्व भारतीय ज्ञानपरम्परा का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत है, जिसमें धर्म, कर्तव्य तथा नेतृत्व के आदर्शों का समन्वित स्वरूप प्राप्त होता है। यह पर्व केवल कुरुक्षेत्र युद्ध का वर्णन प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि मानव जीवन के नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक आयामों का भी गहन विवेचन करता है। भीष्मपर्व में धर्म को केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित न रखकर उसे कर्तव्य, न्याय, सत्य, लोककल्याण तथा आत्मानुशासन के व्यापक परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित किया गया है।

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भीष्मपर्व में धर्म की अवधारणा व्यक्ति के उत्तरदायित्वपूर्ण आचरण से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। श्रीकृष्ण अर्जुन को स्वधर्म के पालन का उपदेश देकर यह प्रतिपादित करते हैं कि धर्म का वास्तविक स्वरूप परिस्थितियों से पलायन में नहीं, बल्कि न्यायोचित कर्तव्य के साहसपूर्ण निर्वहन में निहित है। इस प्रकार धर्म को कर्मप्रधान तथा जीवनोपयोगी सिद्धान्त के रूप में स्थापित किया गया है [Vedavyasa \(2022\)](#), [Tilak \(2011\)](#)। भीष्मपर्व का एक प्रमुख योगदान कर्तव्यबोध एवं निष्काम कर्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन है। गीता में प्रतिपादित कर्मयोग व्यक्ति को फलासक्ति से मुक्त होकर उत्तरदायित्वपूर्ण कर्म करने की प्रेरणा देता है। यह सिद्धान्त न केवल आध्यात्मिक उन्नति का साधन है, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व तथा लोककल्याण की भावना को भी सुदृढ़ करता है [Gandhi \(2010\)](#), [Aurobindo \(2005\)](#)। वर्तमान युग में, जब व्यक्ति परिणाम-केंद्रित जीवनशैली और मानसिक तनाव से ग्रस्त है, तब निष्काम कर्म का सिद्धान्त विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होता है। नेतृत्व की दृष्टि से भी भीष्मपर्व अत्यन्त समृद्ध है। भीष्म पितामह का नेतृत्व त्याग, निष्ठा, अनुशासन तथा कर्तव्यपरायणता का आदर्श प्रस्तुत करता है, जबकि श्रीकृष्ण का नेतृत्व नैतिकता, दूरदर्शिता, लोकमंगल तथा प्रेरणादायी मार्गदर्शन का उत्कृष्ट उदाहरण है। इन दोनों नेतृत्व प्रतिमानों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि प्रभावी नेतृत्व का आधार केवल शक्ति या अधिकार नहीं, बल्कि चरित्र, विवेक, उत्तरदायित्व तथा लोकहित के प्रति प्रतिबद्धता है [Vedavyasa \(2019\)](#), [Radhakrishnan \(2007\)](#)। समकालीन सन्दर्भ में भीष्मपर्व की शिक्षाएँ अत्यन्त प्रासंगिक हैं। नैतिक संकट, मूल्यहीनता, नेतृत्वहीनता तथा सामाजिक विघटन जैसी समस्याओं के समाधान के लिए भीष्मपर्व में प्रतिपादित धर्म, कर्तव्य तथा नेतृत्व सम्बन्धी सिद्धान्त महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। प्रशासन, शिक्षा, प्रबन्धन, राजनीति तथा सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में इन सिद्धान्तों का अनुप्रयोग मानव कल्याण तथा सामाजिक समरसता की स्थापना में सहायक हो सकता है [Upadhyay \(2018\)](#), [Sharma \(2016\)](#)। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भीष्मपर्व भारतीय संस्कृति और दर्शन की एक अमूल्य निधि है। इसमें प्रतिपादित धर्म, कर्तव्य एवं नेतृत्व के आदर्श न केवल प्राचीन भारतीय समाज के लिए महत्वपूर्ण थे, बल्कि वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी समान रूप से प्रासंगिक हैं। यही कारण है कि भीष्मपर्व आज भी मानव जीवन के नैतिक मार्गदर्शन, व्यक्तित्व-निर्माण तथा उत्तरदायी नेतृत्व के लिए एक शाश्वत प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

REFERENCES

- Aurobindo, S. (2005). *Essays on the Gita (एसेज ऑन द गीता)*. Sri Aurobindo Ashram Publication Department.
- Chinmayananda, S. (2002). *The Holy Gita (द होली गीता)*. Central Chinmaya Mission Trust.
- Gandhi, M. K. (2010). *Anasakti Yoga: The Gospel of Selfless Action According to the Gita (अनासक्ति योग: द गॉस्पेल ऑफ सेल्फलेस एक्शन अकॉर्डिंग टू द गीता)*. Navajivan Publishing House.
- Radhakrishnan, S. (2007). *The Bhagavadgita (द भगवद्गीता)*. HarperCollins India.
- Sharma, R. N. (2016). *The Nature of Dharma in the Mahabharata (महाभारत में धर्म का स्वरूप)*. Eastern Book Linkers.
- Shastri, P. V. (2014). *Mahabharata Mimansa (महाभारत मीमांसा)*. Chaukhamba Vidyabhawan.

- Tilak, B. G. (2011). Shrimad Bhagavad Gita Rahasya (श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य). Lokmanya Tilak Mandale Trust.
- Upadhyay, B. (2018). Bharatiya Darshan (भारतीय दर्शन). Chaukhamba Orientalia.
- Vedavyasa (2019). Mahabharata: Bhishma Parva (महाभारत: भीष्मपर्व). Gita Press.
- Vedavyasa (2022). Shrimad Bhagavad Gita (श्रीमद्भगवद्गीता). Gita Press.